P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-12* August- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मेवाड़ क्षेत्र में देवी माँ का नवरात्रि उत्सव

Goddess Mother's Navratri Festival in Mewar Region

Paper Submission: 12/08/2020, Date ofAcceptance: 25/08/2020, Date of Publication: 26/08/2020

श्याम एस. कुमावत
एसोसिएट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय मीरा कन्या
महाविद्यालय, उदयपुर,
राजस्थान, भारत

सारांश

धार्मिक आस्था एवं विश्वास के संदर्भ उन परम्पराओं के साथ जुड़े हुए रहे हैं जिनकी मान्यता एवं प्रचलन लोक उत्सवों की स्वीकारोक्तियों के साथ जुड़े होते हैं। इनकी अभिव्यक्तियाँ हैं और मान्यताएँ हैं। देवी माँ का नवरात्रि उत्सव इसी प्रकार की अभिव्यक्ति एवं स्वीकारोक्ति है जो नौ दिनों तक सम्पूर्ण मेवाड़ अंचल में धूमधाम से मनाया जाता है। इन नौ दिनों तक माँ दुर्गा के नौ विविध स्वरूपों की पूजा–आराधना की जाती है। मन्दिर, देवरों एवं शक्तिपीठों में दुर्गाशप्तशती एवं नवान्ह पारायण पाठ किये जाते हैं। गली–मौहल्लों में माँ की प्रतिमा के समक्ष सामूहिक रूप से गरबा एवं डांडिया रास किये जाते हैं। अभिजन लोग अष्ठमी एवं नवमी पर हवन करते हैं और जवारों का विसर्जन करते हैं। नवरात्रि के नौ दिन तक व्रत–उपवास की भी परम्परा रहती है तथा विविध शक्तिपीठों में माँ के दर्शन करके अपने में एक नई शक्ति का संचार करने की इच्छा भी बलवती रहती है। प्रस्तुत लेख में ऐसे ही अनेक पहलूओं को देखने, जांचने एवं समझने का प्रयास किया गया है।

References to religious faith and belief have been associated with traditions whose beliefs and practices are associated with confessions of folk festivals. They have expressions and beliefs. The Navratri festival of Mother Goddess is a similar expression and confession which is celebrated with pomp in the entire Mewar zone for nine days. For these nine days, nine different forms of Maa Durga are worshiped. Durgashaptashati and Navanh Parayan are recited in temples, devars and Shaktipeeths. Garba and Dandiya Raas are performed collectively in front of the mother's statue in the street. The elites perform Havan on the eighth and Navami and immerse the jawars. There is also a tradition of fasting and fasting for nine days of Navratri, and the desire of communicating a new power in itself is strengthened by seeing the mother in various Shaktipeeths. In the article presented, an attempt has been made to see, examine and understand many such aspects.

मुख्य शब्द : लोक परम्परा, धार्मिक उत्सव, देवी पूजा, शक्तिपीठ, घट स्थापना, हवन क्रिया, जवारा विसर्जन, गरबा नृत्य, शोभायात्रा।

Folk traditions, religious celebrations, Goddess worship, Shaktipeeth, Ghat installation, Havan Kriya, Jawara immersion, Garba dance, procession

प्रस्तावना

'सामाजिक संरचना' तथा 'परम्परा' की व्यवस्थाएँ भारतीय सामाजिक प्रघटना तथा इसकी वास्तविकताओं के सम्पूर्ण 'पहलूओं' को समाहित करती है। सामाजिक यथार्थ के इन दो स्वरूपों के वर्गीकरण में परम्परा को 'लघु एवं वृहत' परम्पराओं में तथा सामाजिक संरचना को 'वृहत संरचनाओं तथा लघु–संरचनाओं' में उपविभाजित किया गया है। लघु एवं वृहत परम्पराओं की अवधारणाओं का प्रयोग सर्वप्रथम रॉबर्ट रेडफील्ड (1955) ने मेक्सिन समुदायों के अपने अध्ययनों में किया हैं। इस प्रारूप से प्रभावित होकर, मिल्टन सिंगर (1955–56) व मैकिम मैरियट (1955) ने इस अवधारणात्मक संरचना का प्रयोग कर भारत में सामाजिक परिवर्तन के कुछ अध्ययन कियें। इस उपागम में आधारभूत विचार सभ्यता तथा परम्परा का सामाजिक संगठन है। प्रथम स्तर पर सांस्कृतिक प्रक्रियाएं लघु परम्पराओं का गठन करती हैं तथा द्वितीय स्तर पर वृहत परम्पराओं का निर्माण करती हैं। तथापि, परम्पराओं के इन दोनों स्तरों के मध्य निरन्तर अंतः क्रिया चलती रहती हैं (योगेन्द्रसिंह, 2006)। ऐसा माना जाता है कि इस परिवर्तन की दिशा लोक अथवा कृषक सांस्कृतिक संरचना व सामाजिक संगठन के नगरीय

सांस्कृतिक संरचना व सामाजिक संगठन की ओर होती है। तथापि, के माध्यमों से एक वैश्विक, सार्वभौमिक संस्कृति के प्रतिमान के रूप में होता है (मैरियट 1955)। इन्द्रदेव (1985) ने भी अपने लेख में लोक संस्कृति एवं लोक महोत्सव का उद्‌गम कृषक समाज की मौखिक परम्पराओं में माना है।

डी.पी. मुकर्जी (2002) के लेखकों में परम्पराओं के उन स्तरों और प्रकारों का विषद् विवेचन मिलता है जो अन्तःक्रिया और टकराव के माध्यम से परिवर्तन को प्रकट करते हैं। वे मुख्यतया भारतीय परम्परा के पश्चिम के साथ अन्तःक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, जिसके अन्तर्गत भारतीय परम्परा के पश्चिम के सम्पर्क में आने कारण जहां एक ओर सांस्कृतिक विरोधाभासों की शक्तियां मुखरित हुई, वहीं दूसरी और इसके कारण एक नए मध्यम वर्ग का जन्म हुआ। लुई ड्यूमा (1970) भारतीय समाज को सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में नहीं देखते अपितु मुख्य प्रतिमानों या संज्ञानात्मक संरचनाओं अथवा विचारणात्मक व्यवस्थाओं के रूप में देखते हैं। ड्यूमा के अनुसार भारत की परम्परागत सामाजिक संरचना में धर्म अथवा नैतिक व्यवस्था की उस अवधारणा पर आधारित जातियों के सोपानीकृत संगठन द्वारा समग्रता के सिद्धान्त का परिपोषण होता था। जिस अवधारणा द्वारा सोपान क्रम सिद्धान्त को बल मिलता था इसी के सामाजिक असमानता, प्रदूषण–पवित्रता तथा पुजारी–राजा के गठजोड़ के विचार फलित होते थे ताकि करिश्माई सत्ता के माध्यम से सामाजिक व्यवस्था को लागू किया जा सकें।

अध्ययन के उद्देश्य

यह लेख ''धर्म का समाजशास्त्र'' पर आधारित है जो कि समाज मं लोगों की धार्मिक भावनाओं, आस्था, विश्वास, धार्मिक प्रक्रियाओं एवं परम्पराओं के साथ जुड़ा हुआ हैं। इस अध्ययन एवं लेख के प्रमुख उद्‌देश्य निम्न प्रकार है–

1. समाज में लोगों की धार्मिक पद्धतियों एवं आस्थाओं की पहचान करना,
2. जन–समूह के द्वारा धार्मिक एवं सांस्कृतिक अस्मिताओं एवं परम्पराओं को अक्षुण्ण बनाये रखने की मनोवृत्तियों की पहचान करना,
3. ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में धार्मिक परम्पराओं एवं उत्सवों की पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन करना,
4. धर्म एवं धार्मिक उत्सवों की पद्धतियों के प्रकार्यात्मक स्वरूप की पहचान करना,
5. धार्मिक उत्सवों में बदलते मूल्यों एवं नवीन स्वरूपों एवं प्रतिमानों की पहचान करना,
6. धर्म एवं संस्कृति में सह–सम्बन्ध के स्वरूपों की व्याख्या करना,
7. धार्मिक उत्सवों के आधार पर समाज के बदलते स्वरूप की पहचान करना।

नवरात्रि में माँ दुर्गा की आराधना

सम्पूर्ण राजस्थान के साथ मेवाड़ में भी माँ दुर्गा की पूजा–आराधना की सदियों पुरानी परम्परा आज भी कायम है। यहाँ के अधिकांश राजपूत शक्ति, अंबा या देवी अंतिम अवस्थाओं में इसका परिणाम विशेषतः सभ्यताओं के मध्य बढ़े हुए आदान–प्रदान के उपासक हैं। ये देवी विश्व–माता मानी जाती हैं। मातृदेवी को माँ दुर्गा के नाम से जाना जाता है। साल में नौ रातों की दो नवरात्रियाँ उनके नाम पर पवित्र मानी जाती है। विद्वान भक्त इन रातों में दुर्गा सप्तशती का पाठ करते हैं और उनकी पूजा से संबंधित विधि–विधान आदि संपादित करते हैं। इस अवसर पर उपवास भी रखा जाता है। जो लोग स्वयं पूजा और उपवास नहीं कर पाते, उनकी ब्राह्मणों की मदद लेने की भी परम्परा रही है। उनके बदले ब्राह्मण पूजा करते हैं और उपवास करते हैं। हिन्दू धर्म की सभी जातियों में भी माँ दुर्गा की पूजा–उपासना की परम्परा रही हैं जो आधुनिक काल में अति उत्साह के साथ वृद्धि की ओर अग्रसर है। कई भक्त लोग नवरात्रि के नौ दिन तक निराहार रहते हैं, अन्न ग्रहण नहीं करते, पावों में जूते–चप्पल नहीं पहनते, पुरूष लोग दाढ़ी नही बनाते, नीचे जमीन पर ही सोते हैं, आदि। कुछ भक्त लोग तो कई किलोमीटर तक नंगे एवं उलटे पॉव चलकर दुर्गम एवं दुरस्त पहाड़ी स्थलों पर माँ के मन्दिर में दर्शन करने पहुँचते हैं। भक्त लोग माँ से अपनी मनोकामनाओं को पूरा करने के लिए अपने विशेष प्रयास करते हैं। नवरात्रि के इस अवसर पर माता के मन्दिर एवं शक्तिपीठ आकर्षक रंगों एवं विद्युत रोशनी से जगमगा उठते हैं। भजन–कीर्तन की स्वर लहरियाँ चारों ओर बिखर जाती हैं। सभी शक्तिपीठों में चौबीस घण्टे माता के दर्शन के लिए लम्बी कतारें लगी रहती है।

नवरात्र पूजन

भगवती जगज्जननी माँ जगदम्बा सर्वेश्वर्यमयी और समस्त ऐश्वर्यो की अधिष्ठात्री मानी गई है। हिन्दू–धर्म में यह माना गया है कि यद्यपि माँ की आराधना तो हर समय करनी ही चाहिए फिर भी नवरात्रा माँ की आराधना का पावन समय होता है। वर्ष में दो प्रमुख नवरात्रा पूजन संवत्सर होता है। प्रथम संवत्सर चैत्र की वासन्ती नवरात्रि से प्रारम्भ होता है, अतः इस समय उनकी आराधना वर्ष के मंगलमय प्रारम्भ के लिए भी आवश्यक मानी गई है। दूसरी नवरात्रि आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से प्रारम्भ होने वाली शारदीय नवरात्रि होती है। अश्विन मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिप्रदा से नवमी तक नवदुर्गा की पूजा की जाती हैं। दुर्गाशप्तशती का पाठ किया जाता है (चतुर्वेदी 2002)।

नौ दिन तक व्रत करके लापसी, हलवा व चावल का भोग लगाया जाता है। अष्टमी को दुर्गा के मन्दिर में हवन किया जाता है। दुर्गाष्टमी व नवमी को नौ कुंवारी कन्याओं को दुर्गा का रूप मानते हुए भोजन कराया जाता है। कई स्थानों पर श्रीरामचरित्र मानस के नवान्ह पारायण पाठ भी किए जाते हैं। ऐसा माना गया है कि माँ भगवती जगज्जननी जगदम्बा सर्वदेवमयी है, उनका प्राकट्य समस्त देवों के सम्मिलित तेज से हुआ है। अतः उनकी पूजा से समस्त देवताओं की पूजा हो जाती है। साधक को उनकी पूजा करते समय उनके प्रति मातृभाव रखना चाहिए। उनसे यही प्रार्थना करनी चाहिए कि हे माँ ! मैं अपका शिशु हूँ, मैं जो कुछ भी कर रहा हूँ उसे ही अपनी

पूजा मानकर आप मुझ पर प्रसन्न हों (पं. शिवदत्त शास्त्री 2006)।

देवी सर्व लीलाधारिणी हैं। वेदोक्त रात्रिसूक्त, शक्त्याधिकार, देवी पुराण व अन्य आगमिक ग्रंथों में देवी के विभिन्न स्वरूपों, लीलाओं और माहात्मय, अभ्यर्थना आदि का वर्णन मिलता हैं। जो विभिन्न नामों से अपने पृथक–पृथक गुणों के लिए उपचारित– उपासित है, वे दुर्गा या अम्बिका हैं। वीरों की यह सहायिका रही और दुर्बुद्धि दुष्टों की संहारिका। इसीलिए देवी का नाम स्मरण किसी रक्षा कवच से कम नही माना जाता। देवी का स्मरण और उसके स्वरूप की प्रतिष्ठा करने वाला भूतल पर अपने सुयश के साथ वृद्धि को, कीर्ति को प्राप्त होता है (श्री कृष्ण 'जुगनू' 2000)।

मेवाड़ में देवी मन्दिरों की परम्परा

शक्ति पूजा की परम्परा में देखा जाए तो मेवाड़ और उसके उपक्षेत्रों में देवी पीठों, प्रतिमाओं का प्रारम्भिक प्रसार मिलता हैं। उदयपुर जिले के जगत गांव में ईसा की पांचवी–छठी शताब्दी में ही शक्ति के विविध स्वरूपों के मूल्यांकन की परम्परा चल पड़ी थी। इस क्षेत्र में हरे सुभाजा प्रस्तरो से मातृका प्रतिमाऐं बनी। छठी शताब्दी में निर्मित ऐंद्री, अम्बिका, शिशु क्रोड़ा आदि की प्रतिमाऐं गुप्तकालीन परमार मूर्तिकला की जीवंत उदाहरण ही नहीं, इस क्षेत्र की शक्तिपूजा, प्रतिष्ठा, परम्परा की भी प्रतीक है।

जगत ही नहीं, कुण्डेश्वर (नागदा), खोर (चितौड़गढ), ईसवाल, नांदेशमा, दरीबा, छोटी सादड़ी, उनवास, जावर माईन्स (जावर माता) आदि स्थानों से मिली मातृ प्रतिमाऐं यह सिद्ध करती हैं कि मेवाड़ में शक्तिपूजा के लिए पीठों की स्थापना के लिए लोक मानस प्रारम्भ से ही श्रद्धानवत और सचेष्ट रहा है। लोक समाज ने यहां लोकांचल में अनगढ़ प्रतिमाएं थरप कर उन्हें इच्छित नाम दिया और अपनी आस्था प्रकट की, वहीं सुसंस्कृत, अभिजात्य संस्कारों के धनी समाज ने शास्त्रोक्त स्वरूपों के अनुसार विधि–विधान के साथ देवी की प्रतिमाओं का निर्माण कराया और उन्हें देवालयों मे प्रतिष्ठापित कर लोकमंगल की कामना की।

देवी के विविध स्वरूपों की प्रतिष्ठा

मेवाड़ में देवी के शास्त्रोक्त नामों और रूपों में द्वादश गौरी, षड़, गवरी, पंचलीला, जयादि द्वारपालिकाओं के साथ ही त्रिगुणात्मक सृष्टि की नियंता मातृ शक्तियों की मान्यता रही हैं। सृष्टि की आदि कारण महालक्ष्मी, नवदुर्गा (नीलकंठी, क्षेमकरी, हरसिद्धि, रूद्राक्ष दुर्गा, वनदुर्गा, अग्नि दुर्गा, जय दुर्गा, विंध्यवासिनी और रिपुमर्दिनी दुर्गा)। महाविद्या के साथ ही चामुण्डा, चण्डिका की भी मान्यता और प्रतिष्ठा रही है। यहाँ ऐसा कोई द्वार नहीं जहाँ द्याढ़ी माता के रूप में अम्बिका की मान्यता न हो और ऐसा कोई सनातन समाज नहीं जो 'असिपाशिनी' के प्रति नतमस्तक न हो। यहाँ के आदिवासी समाज ने भी अम्बिका की अम्बावा ओर अंबा अथवा आमज माता नाम से प्रतिष्ठा की और उसकी चंड–मुण्ड मर्दन की लीलाओं को प्रदर्शनपरक अभिव्यक्ति दी। भील आदिवासियों के प्रमुख लोकनृत्य 'गवरी' में अम्बिका और रक्तबीज के युद्ध की लीला, उसके भारत गायन और नवरात्र में विरूदाने की अभिव्यक्ति यह सिद्ध करती है कि अनादि काल से मेवाड़ में अंबिका माता की पूजा की परम्परा रही हैं। अम्बिका और चामुण्डा माता ही यहाँ की ग्राम रक्षिका 'खेड़ा खूंट' देवी हैं (श्री कृष्ण जुगनू 2000)।

नवरात्रि में दुर्गा के नौ स्वरूपों का पूजन

माँ दुर्गा के मुख्य रूप से नौ प्रमुख स्वरूप माने गये हैं। इन नौ रूपों की नवरात्रि के नौ दिनों तक विशेष पूजा–अर्चना की जाती है। माँ दुर्गा के इन नौ स्वरूपों का वर्णन एवं महात्म्य निम्न प्रकार है–

शैलपुत्री

माँ दुर्गा अपने पहले स्वरूप में 'शैलपुत्री' के नाम से जानी जाती हैं। पर्वतराज हिमालय के यहाँ पुत्री के रूप में उत्पन्न होने के कारण इनका नाम 'शैलपुत्री' नाम पड़ा था। वृषभ–स्थिता इन माताजी के दाहिने हाथ में त्रिशुल और बायें हाथ में कमल सुशोभित है। अपने पूर्वजन्म में ये प्रजापति दक्ष की कन्या के रूप में उत्पन्न हुई थी, तब इनका नाम 'सती' था। दोनों ही जन्मों में इनका विवाह भगवान शिव से हुआ था। शैलपुत्री दुर्गा का महत्व और शक्तियाँ अनन्त हैं। नवरात्र–पूजन में प्रथम दिवस इन्हीं की पूजा और उपासना की जाती हैं। इस प्रथम दिन की उपासना में योगी अपने मन को 'मूलाधार' चक्र में स्थित करते हैं। यहीं से उनकी योग साधना का प्रारम्भ होता हैं।

ब्रह्मचारिणी

माँ दुर्गा की नव शक्तियों का दूसरा स्वरूप ब्रह्मचारिणी का हैं। ब्रह्मचारिणी अर्थात् तप की चारिणी– तप का आचरण करने वाली। ब्रह्मचारिणी देवी का स्वरूप पूर्ण ज्योतिर्मय एवं अत्यन्त भव्य हैं। इनके दाहिने हाथ में जप की माला एवं बायें हाथ में कमण्डल रहता हैं। इन्होनें भगवान शिव को पति रूप में प्राप्त करने के लिए अत्यन्त कठिन तपस्या की थी। इसी दुष्कर तपस्या के कारण इन्हें तपश्चारिणी अर्थात् ब्रह्मचारिणी नाम से अभिहित किया गया। कई हजार वर्षों तक ये निर्जल और निराहार तपस्या करती रही। सूखे बेल पत्रों (पर्ण) को भी खाना छोड़ देने के कारण इनका एक नाम 'अपर्णा' भी पड़ गया। माँ दुर्गा का यह दूसरा स्वरूप भक्तों और सिद्धों को अनन्त फल देने वाला माना गया है। इनकी उपासना से मनुष्य में तप, त्याग, वैराग्य, सदाचार, संयम की वृद्धि होती है। जीवन के कठिन संघर्षों में भी उसका मन कर्तव्य–पथ से विचलित नहीं होता। माँ ब्रह्मचारिणी देवी की कृपा से उसे सर्वत्र सिद्धि और विजय की प्राप्ति होती हैं। इस दिन साधक का मन 'स्वाधिष्ठान' चक्र में स्थित होता है। इस चक्र में अवस्थित मनवाला योगी उनकी कृपा और भक्ति प्राप्त करता है।

चन्द्रघण्टा

माँ दुर्गा की तीसरी शक्ति का नाम 'चन्द्रघण्टा' है। नवरात्र–उपासना में तीसरे दिन इन्हीं के विग्रह का पूजन–आराधन किया जाता हैं। इनका यह स्वरूप परम शान्तिदायक और कल्याणकारी हैं। इनके मस्तक में घण्टे के आकार का अर्धचन्द्र है, इसी कारण इन्हें चन्द्रघण्टा देवी कहा जाता हैं। इनके दस हाथ हैं। दस हाथों में खड्ग आदि शस्त्र तथा बाण आदि अस्त्र विभूषित हैं।

इनका वाहन सिंह हैं। इनकी मुद्रा युद्ध के लिए अद्यत रहने की होती है। इनके घण्टे की–सी भयानक चण्डध्वनि से अत्याचारी दानव–दैत्य–राक्षस सदैव प्रकम्पित रहते हैं, वहीं इनके घण्टे की ध्वनि सदा अपने भक्तों की प्रेत–बाधादि से रक्षा करती रहती हैं। इनका ध्यान करते ही शरणागत की रक्षा के लिए इस घण्टे की ध्वनि निनादित हो उठती हें। माँ चन्द्रघण्टा की कृपा से साधक के समस्त पाप और बाधाएँ विनष्ट हो जाती हैं। इनकी आराधना सद्यः फलदायी हैं। इनकी आराधना से प्राप्त होने वाला एक बहुत बड़ा सद्गुण यह भी हैं कि साधक में वीरता–निर्भयता के साथ ही सौम्यता एवं विनम्रता का भी विकास होता है।

कूष्माण्डा

माँ दुर्गा के चौथे स्वरूप का नाम कूष्माण्डा है। अपनी मन्द, हलकी हंसी द्वारा ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इन्हें कूष्माण्डा देवी के नाम से अभिहित किया गया हैं। इनकी आठ भुजाएँ हैं। इसलिए ये अष्टभुजा देवी के नाम से विख्यात हैं। इनके सात हाथों में क्रमशः कमण्डल, धनुष, बाण, कमल–पुष्प, अमृतपूर्ण कलश, चक्र तथा गदा हैं आठवें हाथ में सभी सिद्धियों और विधियों को देने वाली जपमाला हैं। इनका वाहन सिंह हैं। संस्कृत भाषा मे कूष्माण्ड कुम्हड़े को कहते हैं। बलियों में कुम्हड़े की बलि इन्हें सर्वाधिक प्रिय हैं। इस कारण से भी ये कूष्माण्डा कहीं जाती हैं। माँ कूष्माण्डा की उपासना से भक्तों के समस्त रोग–शोक विनष्ट हो जाते हैं। इनकी भक्ति से आयु, यश, बल और आरोग्य की वृद्धि होती हैं। माँ कूष्माण्डा अयल्प सेवा और भक्ति से भी प्रसन्न होने वाली हैं। यदि मनुष्य सच्चे हृदय से इनका शरणागत बन जाय तो फिर उसे अत्यन्त सुगमता से परम पद की प्राप्ति हो सकती हैं।

स्कन्दमाता

माँ दुर्गा के पाँचवे स्वरूप को स्कन्दमाता के नाम से जाना जाता है। ये भगवान स्कन्द 'कुमार कार्तिकेय' नाम से भी जाने जाते हैं इन्हीं भगवान स्कन्द की माता होने के कारण माँ दुर्गा के इस पाँचवें स्वरूप को स्कन्दमाता के नाम से जाना जाता है। इनके विग्रह में भगवान स्कन्द बालरूप में इनकी गोद में बैठे होते हैं। स्कन्द मातृस्वरूपिणी देवी के चार भुजाऐं हैं। ये दाहिनी तरफ की ऊपरवाली भुजा से भगवान स्कन्द को गोद में पकड़े हुए हैं और दाहिनी तरफ की नीचे वाली भुजा जो ऊपर की ओर उठी हैं उसमें कमल–पुष्प हैं। बायी तरफ की ऊपर वाली भुजा वरमुद्रा में तथा नीचे वाली भुजा जो ऊपर की ओर उठी हैं उसमें भी कमल–पुष्प लिये हुए हैं। सिंह इनका वाहन हैं। ये कमल के आसन पर विराजमान रहती हैं। इसी कारण से इन्हें पदमासना देवी भी कहा जाता है। माँ स्कन्दमाता की उपासना से भक्त की समस्त इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इस मृत्युलोक में ही उसे परम शान्ति और सुख का अनुभव होने लगता हैं। उसके लिए मोक्ष का द्वार स्वयमेव सुलभ हो जाता हैं। स्कन्दमाता की उपासना से बालरूप स्कन्द भगवान की उपासना भी स्वयमेव हो जाती हैं।

कात्यायनी

माँ दुर्गा के छठे स्वरूप का नाम कात्यायनी हैं। इन्होनें कात्यायन ऋषि की पूजा ग्रहण कर दशमी को महिषासुर का वध किया था। माँ कात्यायनी अमोध फलदायिनी हैं। इनका वर्ण स्वर्ण के समान चमकीला और भास्वर हैं। इनकी चार भुजाएँ हैं। माताजी का दाहिनी तरफ का ऊपर वाला हाथ अभय मुद्रा में हैं तथा नीचे वाला वरमुद्रा में हैं। बायीं तरफ के ऊपर वाले हाथ में तलवार और नीचे वाले हाथ में कमल–पुष्प सुशोभित हैं। इनका वाहन सिंह हैं। माँ कात्यायनी की भक्ति और उपासना द्वारा मनुष्य को बड़ी सरलता से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों फलों (पुरूषार्थों) की प्राप्ति हो जाती हैं। वह इस लोक में स्थित रहकर भी अलौकिक तेज और प्रभाव से युक्त हो जाता है। उसके रोग, शोक, संताप, भय आदि सर्वथा विनष्ट हो जाते हैं। जन्म–जन्मांतर के पापों को विनष्ट करने के लिए माँ की उपासना से अधिक सुगम और सरल मार्ग दूसरा नहीं हैं।

कालरात्रि

माँ दुर्गा की सातवीं शक्ति कालरात्रि के नाम से जानी जाती हैं। इनके शरीर का रंग घने अंधकार की तरह एकदम काला हैं। सिर के बाल बिखरे हुए हैं। गले में विद्युत की तरह चमकने वाली माला हैं। इनके तीन नेत्र हैं। ये तीनों नेत्र ब्रह्माण्ड के सदृश गोल हैं। इनसे विद्युत के समान चमकीली किरणें निःसृत होती रहती हैं। इनकी नासिका के श्वास–प्रश्वास से अग्नि की भयंकर ज्वालाएँ निकलती रहती हैं। इनका वाहन गर्दभ (गदहा) हैं। ऊपर उठे हुए दाहिने हाथ की वरमुद्रा से सभी को वर प्रदान करती हैं। दाहिनी तरफ का नीचे वाला हाथ अभयमुद्रा में हैं। बायीं तरफ के ऊपर वाले हाथ में लोहे का कांटा तथा नीचे वाले हाथ में खड़ग (कटार) हैं। माँ कालरात्रि का स्वरूप देखने में अत्यन्त भयानक हैं, लेकिन ये सदैव शुभ फल ही देने वाली हैं। इसी कारण इनका एक नाम 'शुभंकरी' भी हैं। माँ कालरात्रि दुष्टों का विनाश करने वाली हैं। दानव, दैत्य, राक्षस, भूत, प्रेत आदि इनके स्मरण मात्र से ही भयभीत होकर भाग जाते हैं। ये ग्रह–बाधाओं को भी दूर करने वाली हैं। इनके उपासक को अग्नि–भय, जल–भय, जन्तु–भय, शत्रु–भय, रात्रि–भय आदि कभी नहीं होते। इनकी कृपा से वह सर्वथा भय–मुक्त हो जाता हैं।

महागौरी

माँ दुर्गा की आठवीं शक्ति का नाम 'महागौरी' हैं। इनका वर्ण पूर्णतः गौर हैं। इस गौरता की उपमा शंख, चन्द्र और कुन्द के फूल से की गई हैं। इनकी आयु आठ वर्ष की मानी गयी हैं। इनके समस्त वस्त्र एवं आभूषण आदि भी श्वेत हैं। इनकी चार भुजाएँ हैं। इनका वाहन वृषभ हैं। इनके ऊपर के दाहिना हाथ अभय मुद्रा में और नीचे वाले दाहिने हाथ में त्रिशुल हैं। ऊपर वाले बायें हाथ में डमरू और नीचे का बायां हाथ वर–मुद्रा में हैं। इनकी मुद्रा अत्यन्त शान्त हैं। इनकी शक्ति अमोघ और सद्यः फलदायिनी हैं। इनकी उपासना से भक्तों के सभी कल्मष धुल जाते हैं। उसके पूर्व संचित पाप भी विनष्ट हो जाते हैं। भविष्य में पाप–संताप, दैन्य–दुःख उसके पास कभी नहीं आते। वह सभी प्रकार के पवित्र और अक्षय पुण्यों का

अधिकारी हो जाता हैं। माँ महागौरी का ध्यान–स्मरण, पूजन–आराधन भक्तों के लिए सर्वविध कल्याणकारी हैं। ये मनुष्य की वृत्तियों को सत् की और प्रेरित करके असत् का विनाश करती हैं।

सिद्धिदात्री

माँ दुर्गा की नवीं शक्ति का नाम 'सिद्धिदात्री' हैं। ये सभी प्रकार की सिद्धियों को देने वाली हैं। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व–ये आठ सिद्धियां होती हैं। ब्रह्मवेवर्तपुराण के श्री कृष्ण–जन्मखण्ड में यह संख्या अठारह बताई गई है, (श्री कृष्ण 'जुगनू' 2000) देवीपुराण के अनुसार भगवान शिव ने इनकी कृपा से ही इन सिद्धियों को प्राप्त किया था। इनकी अनुकम्पा से ही भगवान शिव का आधा शरीर देवी का हुआ था। इसी कारण वह लोक में 'अर्द्धनारीश्वर' नाम से प्रसिद्ध हुए। माँ सिद्धिदात्री चार भुजाओं वाली हैं। इनका वाहन सिंह है। ये कमल पुष्प पर भी आसीन होती हैं। इनके दाहिनी तरफ के नीचे वाले हाथ में शंख और ऊपर वाले हाथ में कमल पुष्प हैं। नवरात्र–पूजन के नवें दिन इनकी उपासना की जाती हैं। इस दिन शास्त्रीय विधि–विधान और पूर्ण निष्ठा के साथ साधना करने वाले साधक को सभी सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती हैं। सृष्टि में उसके लिए कुछ भी अगम्य नहीं रह जाता। ब्रह्माण्ड पर पूर्ण विजय प्राप्त करने की सामर्थ्य उसमें आ जाती हैं।

मेवाड़ के ग्रामीण अंचल में नवरात्रि महोत्सव

मेवाड़ के सभी ग्रामीण क्षेत्रों में भी शारदीय नवरात्रि महोत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। सभी गांवों में माताजी के मन्दिर एवं देवरे बने हुए हैं, जहाँ पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ पूरा गाँव मिलकर इस उत्सव को मनाता हैं। ऐसा ही एक गांव 'बासनी कला' है जो उदयपुर से 50 किलोमीटर दूर मावली और फतहनगर के बीच स्थित है। इस गाँव के केन्द्र में चामुण्डा माता का देवरा हैं। इन्हें 'खेड़ा खूँट माता' के नाम से भी जाना जाता हैं।

नवरात्रि घट स्थापना

नवरात्रि स्थापना के दिन प्रातः सभी गाँव वाले एवं विभिन्न देवरों के भोपाजी यहाँ इकट्ठे होते हैं और सभी को अमल का पानी पिलाकर स्वागत किया जाता है। इसके पश्चात् मन्दिर के भोपाजी मिट्टी, गोबर और जौ के दानों को मिलाकर 'जवारा' बोने की रस्म करते हैं। माता की मूर्ति के सामने रेत के ऊपर इस जवारा मिश्रण को बिछाया जाता हैं। इसके ऊपर एक नई मटकी (घट) में शुद्ध पानी भरकर तथा उसके ऊपर हरी घास रखकर जवारा के मिश्रण को रख दिया जाता है। इस घट से धीरे–धीरे पानी रिसता रहेगा। जिससे जवारों की सिंचाई होती रहेगी। माता को तलवार धारण कराई जाती है और गर्म गोबर के कण्डों पर घी से धूप लगाया जाता है। इससे पूरा वातावरण शुद्ध और भक्तिमय हो जाता है। ढ़ोली ढ़ोल बजाकर नवरात्रि का स्वागत और माताजी का अभिनन्दन करता हैं। इस प्रकार नवरात्रि घट स्थापना की रस्म पूरी होती हैं। नवरात्रि स्थापना के इस दिन से ही गाँव में दीपावली की भी तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। महिलाएँ अपने घरों में कच्चे–आंगन को गोबर एवं मिट्टी से लीपकर साफ–सुथरा बनाती हैं।

जवाराँ विसर्जन का सामूहिक उत्सव

नवमीं के दिन गाँव में सामूहिक रूप से मुख्य चामुण्डा माता के मन्दिर एवं माताजी के देवरों पर पूजा–अर्चना के बाद जवॉरा विसर्जन का कार्यक्रम होता हैं, जिसमें पूरा गाँव भाग लेता है। सबसे पहले मुख्य चामुण्डा माता के मन्दिर पर दोपहर में पूजा–अर्चना होती हैं। यहाँ से जवारों को लेकर माताजी के भोपाजी अन्य भोपाओं एवं गाँव वालों के साथ ढ़ोल एवं गाजे–बाजों के साथ जुलूस के रूप में एक के बाद एक गाँव में स्थित माताजी के पाँच अन्य देवरों पर जाते हैं। वहाँ पूजा करके, वहाँ के जवारों को साथ लेकर आगे बढ़ते हैं। इस दौरान भोपाओं के शरीर में देवी–देवता पधारते हें। रास्ते में गाँव वाले भोपाजी एवं माताजी का स्वागत करते हैं, सभी लोग भोपाजी को प्रणाम करके माताजी का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। शाीरिक एवं मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति के परिजन भोपा लोगों से उसकी बीमारी ठीक होने का उपाय पूछते हैं। भोपाजी उन्हें ठीक होने से संबंधित कुछ उपाय बताकर बीमार व्यक्ति पर मोर पंख का झाड़ा लगाकर आशीर्वाद देते हुए आगे बढ़ते हैं। महिलाएँ भोपाजी के धोक लगाकर माताजी से आशीर्वाद लेती हैं और अपने सिर पर जवारे लेकर जुलूस के साथ आगे बढ़ती हैं।

भोपाजी (माताजी) की भविष्यवाणियाँ

नवरात्रि का यह जुलूस गाँव के बाहर नदी पर पहुँचता हैं। नदी के पानी में जवारों को विसर्जित करने के पश्चात् माताजी के भोपाजी आने वाले वर्ष के बारे में कुछ भविष्यवाणियाँ करते हैं–

1. आने वाला समय अच्छा हैं, बारिश अच्छी होगी।
2. अगले वर्ष निर्जला ग्यारस पर खेतों में मक्की बो देना। यह मक्की की फसल खराब नहीं होगी, बीच–बीच में बारिश आती रहेगी।
3. अगले वर्ष खेतों में कपास बोना, यह महंगा बिकेगा। कपास इस वर्ष भी महंगा हैं तथा अगले वर्ष और महंगा होगा, जिससे किसानों को फायदा मिलेगा।
4. गेहूँ की फसल बो देना, इस वर्ष गेहूँ अच्छे होगें।
5. गेहूँ की फसल में मावठ एवं अधिक सर्दी की वजह से आपके गाँव की फसल को नुकसान नहीं होगा। गेहूँ बोने का काम जैसा आप लोगों से हों, वैसे करते रहना। आप लोग जीत में रहोगें।
6. चारों दिशाओं में से किसी एक दिशा में बारिश बहुत कम होगी।
7. अगले वर्ष चैत्र एवं वैशाख महिने में बैल महंगे बिकेंगें।
8. वैशाख एवं ज्येष्ठ के महीने में कुछ ही जगह पर बारिश होगी, उस समय फसल नहीं बोनी हैं।
9. अगली चैत्र एवं वैशाख की नवरात्रि तक रोज शाम को मेरे देवरे पर जोत (दीपक) जलाकर रखना। बस्ती वाले मेरा ध्यान रखेगें तो मैं भी सबका ध्यान रखूंगी और आप लोगों के साथ रहूंगी। आप लोगों की जीत होगी।

10. यह सब भविष्यवाणियाँ करने के बाद माताजी कहते हैं कि अब मेरे ऊपर जल का छींटा डाल दो, ताकि मैं जाऊँ। गांव वाले कहते हैं कि माताजी आप हमारी बस्ती की रखवाली रखना। कार्यक्रम के अन्त में भोपाजी को पूरे गाँव की ओर से साफा पहनाकर सम्मान प्रदान किया जाता हैं। सभी भोपा लोग आपस में गले मिलते हैं, एक–दूसरे को प्रणाम करते हैं और एक–दूसरे से आशीर्वाद लेते हैं। सब सामूहिक रूप से वापिस गांव की ओर प्रस्थान करते हैं, बासनी कला गाँव में नवरात्रि का यह पर्व सम्पन्न होता हैं।

ग्रामीण क्षेत्र में ठाकुर परिवार में नवरात्रि पूजन

नवरात्रि स्थापना

बासनी कला गाँव में ठाकुर श्री नरेन्द्र सिंह जी राणावत का करीब 300 वर्ष पुराना रावला हैं। रावले के अन्दर राणावत वंश की कुलदेवी माँ बायण माता का स्थान बना हुआ है। नवरात्र स्थापना के दिन प्रातःकाल में ठाकुर साहब अपनी पत्नी एवं परिवार के साथ माता के मन्दिर में नवरात्रि स्थापना करते हैं। जवारा बोये जाते हैं। गाँव के पुरोहित जी मंत्रोच्चार के साथ नवरात्रि स्थापना की क्रिया करवाते हैं। पुरोहित जी मंत्र बोलकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गौरी, नारायण आदि सभी देवताओं को नमन करते हैं और ठाकुर साहब को गणपति जी का स्मरण करने को कहते हैं। माता के स्थान पर दीप जलाकर पुरोहितजी पृथ्वी, अंतरिक्ष, वनस्पति, तीनों लोकों एवं सम्पूर्ण विश्व में शांति की कामना करते हैं। मंत्रोच्चारण के साथ नवरात्रि स्थापना की यह क्रिया सम्पन्न होती हैं। पुरोहितजी, ठाकुर दम्पत्ति एवं उपस्थित पूरा परिवार घुटनों के बल झुककर बायण माता के धोक लगाते हैं और जगदम्बे भवानी की जय बोलते हैं।

अष्ठमी पूजन

अष्ठमी के दिन प्रातः विशेष पूजा एवं हवन किया जाता हैं। पुरोहितजी रावले में बायण माता के लिए अपने हाथों से विशेष भोग बनाते हैं। आकर्षक रंगों से हवन की वेदी तैयार करते हैं। गेहूँ के ऊपर आठ दिन पूर्व में बोये गये जवारों का कलश रखते हैं। लाल कपड़े पर गेहूँ के दानों से स्वास्तिक बनाया जाता हैं। पुरोहितजी सम्पूर्ण पूजन सामग्री को हवन वेदी के पास सजा कर रखते हैं। चावल, नारियल, कलश, पूजा सामग्री आदि से सजाकर हवन की विशेष तैयारी की जाती हैं। पण्डितजी सर्वप्रथम प्रथम पूज्य गणेशजी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सरस्वती आदि देवताओं से सभी कार्य सफल बनाने की कामना करते हैं और माता–पिता, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी एवं सभी देवों को प्रणाम करते हैं। देवताओं का स्मरण करने के बाद हवन वेदी में अग्नि को प्रज्जवलित किया जाता हैं। पण्डितजी चारों दिशाओं में हरी दूब से जल छिड़ककर शांति की कामना करते हैं। ठाकुर साहब पवित्र जल को हवन–सामग्री पर छिड़कते हैं। ठाकुर साहब पण्डित जी के कुमकुम एवं चावल से तिलक लगाते हैं और पण्डित जी को ग्यारह रूपये, सुपारी और सूत की दक्षिणा देते हैं, पण्डितजी को प्रणाम करते हैं और इसी के साथ हवन क्रिया प्रारम्भ होती है।

हवन क्रिया

हवन क्रिया संस्कृत भाषा में पूरे विधि–विधान से सम्पन्न कराई जाती हैं। ठाकुर दम्पत्ति गणपति एवं विभिन्न देवताओं के नाम की पवित्र अग्नि में आहूतियाँ देते हैं। अन्तिम प्रक्रिया के रूप में कमल के फूल की कली को घी में डूबोकर एक आहूति दी जाती हैं। एक आहूति नरियल के सूखे गोले एवं केले की भी दी जाती हैं। ठाकुर साहब के समस्त परिवारजन एवं रिश्तेदार इस नवरात्रि हवन में सम्मिलित होते हैं। हवन के आखिर में सभी लोग खड़े होते हैं। ठाकुर दम्पत्ति लाल कपड़े में पंच मेवों की पूर्णाहुति देते हैं। अन्त में माँ की आरती की जाती हैं। ठाकुर दम्पत्ति नवरात्रि में हवन–पूजा सम्पन्न कराने के लिए पण्डित जी का तिलक लगाकर अभिनन्दन करते हैं तथा वस्त्र एवं दक्षिणा देकर विदा करते हैं। रावले में नवरात्रि की पूजा सम्पन्न होने के बाद सभी महिलाऐं नीचे झुककर ठाकुर साहब को प्रणाम करती हैं, और ठाकुर साहब सभी पर माता‌रानी की कृपा बनी रहने का आशीर्वाद देते हैं, और इसी के साथ रावले में नवरात्रि की क्रिया सम्पन्न होती हैं।

शक्तिपीठों (मन्दिरों) में नवरात्रि उत्सव

सम्पूर्ण मेवाड़ के विभिन्न क्षेत्रों में माता के अनेक मन्दिर एवं शक्तिपीठ बने हुए हैं। इनमें से अनेक तो अतिप्राचीन हैं एवं अनेकों की स्थापना समय–समय पर राजा–महाराजाओं, समृद्ध लोगों एवं आमजनों के द्वारा भी करवाई गई है। इन शक्तिपीठों से सभी जनों की आस्था जुड़ी हुई है। लोगों का ऐसा मानना है कि यहाँ दर्शन मात्र से उनकी विभिन्न शारीरिक, मानसिक बीमारियाँ एवं परेशानियाँ दूर होती हैं, उनके आर्थिक संकट दूर होते हैं और उनके रोजगार फलीभूत होते हैं।

आवरी माता का मन्दिर

इन्हीं शक्तिपीठों में एक उदयपुर शहर के बीच में रेती स्टैण्ड पर ''आवरी माता का मन्दिर' है। इस मन्दिर में मेवाड़ के प्रमुख शक्तिपीठ 'आवरी माता' से जोत लाई गई हैं, जो कि उदयपुर से 70 किलोमीटर दूर पूर्व दिशा में स्थित हैं। यहाँ नवरात्रि पर मन्दिर में रंग–रोगन किया जाता हैं, दीवारों पर देवी–देवताओं के चित्र बनाये जाते हैं और आकर्षक विद्युत सज्जा की जाती हैं। इस मन्दिर की बहुत मान्यता हैं। लोगों को ऐसा दृढ़ विश्वास है कि यहाँ आने से लकवा अर्थात् पेरालिसिस, हाथ एवं गर्दन का दर्द आदि कई बीमारियाँ भी ठीक हो जाती हैं। माता की मूर्ति के पास कालाजी और गोराजी भेरूजी के चित्र बने हुए हैं। माता की मूर्ति ब्लेक ग्रेनाईट के पत्थर से बनी हुई हैं और इतनी सुन्दर लगती हैं जैसे माता स्वयं साक्षात उपस्थित हैं। भक्त लोग माँ को चुन्दड़ी, फूलमाला, नारियल और प्रसाद चढ़ाते हैं और प्रार्थना करते हैं कि माता उनकी मनोकामना पूरी करें। भक्त लोगों का कहना है कि माता ने उनकी विभिन्न मनोकामनाओं को पूरा किया हैं और आगे भी माँ की कृपा उनपर बनी रहेगी।

बेदला माता का मन्दिर

उदयपुर शहर से 10 किलोमीटर दूर उत्तर दिशा में ''बेदला माता'' का मन्दिर हैं। यहाँ नवरात्रि पर उदयपुर नगर एवं आस–पास के गाँवों से हजारों की संख्या में बच्चे, बड़े–बुजुर्ग, युवा एवं अन्य लोग अपने परिवार के साथ माता के दर्शन करने के लिए आते हैं। बेदला माता, बेदला राव साहब की ''कुलदेवी' हैं तथा बेदला गाँव भी 'बेदला माता' के नाम से ही जाना जाता हैं। ऐसी मान्यता है कि मूर्ति के सामने 'आगल' के नीचे से निकलने से माता भक्तों की शारीरिक एवं मानसिक परेशानियों को दूर कर देती हैं। सभी भक्त लोग माता को नारियल एवं प्रसाद चढ़ाते हैं और माता को प्रणाम करते हैं। माता के दर्शन के पश्चात् भक्त लोग माँ का चरणामृत पीते हैं, भभूत खाते हैं और भभूत से तिलक लगाकर माँ का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। इसके पश्चात् सभी भक्त लोग मन्दिर की परिक्रमा करते है। परिक्रमा करते समय माता की मूर्ति के पीछे वाले भाग को अपने मस्तक एवं हाथ से छूकर माँ को प्रणाम करते हैं और अपने को स्वस्थ एवं प्रसन्न रखने की माँ से प्रार्थना करते हैं। ऐसी मान्यता है कि नवरात्रि पर माता के दर्शन करने मात्र से भक्तों के कष्ट दूर हो जाते हैं।

उदयपुर शहर के सुथारवाड़ा मौहल्ले में नवरात्रि–पूजन एवं गरबा महोत्सव

विगत 30 वर्षों से शारदीय नवरात्रि में उदयपुर शहर के हर क्षेत्र–मौहल्ले, उपनगरीय क्षेत्र, आदिवासी अंचल एवं सम्पूर्ण मेवाड़–वागड़ क्षेत्र में नवरात्रि पूजा के साथ ही 9 दिवसीय गरबा–नृत्य के प्रचलन में अप्रत्याशित वृद्धि हुई हैं। पहले मेवाड़ क्षेत्र में मात्र मातृशक्ति स्थलों पर मन्दिरों में नवरात्रि पूजन एवं दर्शन का ही प्रचलन था, लेकिन 1990 के पश्चात् गुजरात के गरबा एवं डाण्डिया रास सांस्कृतिक– धार्मिक दृष्टि से मेवाड़ क्षेत्र में तेजी से बढ़ा और आज यह राजस्थान के हर क्षेत्र एवं जिले तक पहुँच गया हैं। उदयपुर शहर में 1990 से पूर्व भट्टियानी चौहट्टा क्षेत्र में कुछ गुजराती भट्ट मेवाड़ा समाज के लोग, जो कि गुजरात से यहाँ आकर बसे थे, वे परिवार अपने घरों की गवाड़ी में गरबा करते थे, और आज भी वे अपनी परम्परा का अनुसरण कर रहे हैं। आज नवरात्रि पर गरबा की धुनों पर सम्पूर्ण उदयपुर एवं मेवाड़ अंचल झूम उठता हैं।

नवरात्रि स्थापना

उदयपुर शहर के सुथारवाड़ा मौहल्ले में नवरात्रि का उत्सव पूरे जोर–शोर एवं भक्तिभाव से मनाया जाता है। यहाँ सड़क के बीच में 40 फीट का ऊँचा मंच बनाकर माँ दुर्गा की प्रतिमा को स्थापित किया जाता है। श्री तुलसीराम जी माली सुथारवाड़ा मित्र–मण्डल के अध्यक्ष एवं इस गरबा कार्यक्रम के संचालक हैं। माँ दुर्गा की सात फीट ऊँची प्रतिमा प्रतिवर्ष मुम्बई से खरीद कर लाई जाती हैं। नवरात्रि स्थापना के दिन सायंकाल पण्डितजी के द्वारा माता को कमल–पुष्प धारण कराया जाता है, पूजा–अर्चना की जाती हैं। पटाखे फोड़कर, नवरात्रि उत्सव की खुशी जाहिर की जाती हैं, माता को 21 बन्दूकों से सलामी दी जाती है, इसके पश्चात् सभी भक्त मिलकर माता की आरती करते हैं। आरती के पश्चात् भक्त लोग एक के बाद एक पहले गणेशजी की झांकी के दर्शन करते हैं। माता के दर्शन करने के लिए भक्तजन कतारबद्ध होकर आगे बढ़ते हैं। माता के दर्शन के पश्चात् भक्तों को माँ का प्रसाद वितरित किया जाता है और सामूहिक रूप से एक साथ ढ़ोल बजाकर नवरात्रि स्थापना की खुशी व्यक्त की जाती हैं।

नवरात्रि का यह उत्सव सम्पूर्ण मेवाड़ में पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ धूमधाम से मनाया जाता है। यह शारदीय नवरात्रि हिन्दू कैलेण्डर के अनुसार अश्विन शुक्ल पक्ष एकम् से लेकर अश्विन शुक्ल पक्ष नवमी तक मनाई जाती है। इसमें माँ दुर्गा की पुजा–आराधना की जाती है। नवरात्रि के नौ दिन माँ दुर्गा के नौ शक्ति स्वरूपों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

गरबा उत्सव

सुथारवाड़ा में नवरात्रि के नौ दिन तक प्रतिदिन शाम को माँ दुर्गा की आरती होती है और भक्त लोग मूर्ति के दर्शन करते हैं। आरती के पश्चात् सायंकाल 7.00 बजे से रात्रि के 10.00 बजे तक बच्चों, युवाओं एवं महिला–पुरूषों के द्वारा सुन्दर परिधानों में माता के प्रांगण में गरबा खेला जाता है। गरबा का पहला राउण्ड छोटी बच्चियों एवं लड़कियों का होता है। गुजराती गरबा के भजनों पर गरबा एवं डाण्डिया नृत्य किया जाता है। इसमें विभिन्न गरबा प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया जाता है। लड़कियाँ और महिलाएँ विशेष गरबा डान्स के लिए महिनों पहले से ही विशेष तैयारी करती है, और सभी की यह इच्छा होती है कि गरबा डान्स प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार उन्हें ही प्राप्त हों। कुछ महिलायें तो अपनी पोशाक भी खुद ही तैयार करती हैं, वहीं कुछ बाजार से खरीद कर लाती हैं। प्रतिवर्ष पोशाक बदली जाती है। सुथारवाड़ा मित्र मण्डल में महिला कार्यकर्ता भी है जो महिलाओं के गरबा राउण्ड में व्यवस्था बनाये रखने का कार्य करती हैं। सुथारवाड़ा का गरबा डांस देखने एवं माताजी की मूर्ति के दर्शन करने के लिए उदयपुर शहर के हर क्षेत्र से हजारों की संख्या में लोग आते हैं। दर्शन के लिए रात्रि 11.00 बजे तक लगातार भक्तों की कतार आगे बढ़ती रहती हैं। सभी माता को प्रणाम करके माँ से अपने सुखी जीवन की कामना करते हैं, गरबा खेलने के पश्चात् आखिर में सभी भक्त लोग मिलकर माँ की आरती करते हैं।

नवरात्रि का आखिरी दिन अर्थात् नवमी की शाम अपना कुछ विशेष महत्व रखती है क्योंकि यह गरबा खेलने का अन्तिम अवसर हैं। इसके बाद पूरे एक वर्ष तक इन्तजार करना पड़ेगा। इसलिए बच्चों का उत्साह भी देखते ही बनता हैं। छोटी बच्चियाँ रंग–बिरंगी सुन्दर पोशाक पहनकर गरबा करती हैं, गरबा करने के लिए वे अच्छी तरह से तैयार होकर आती हैं और सभी सर्वश्रेष्ठ गरबा करना चाहती हैं। बैठे हुए दर्शक उनका गरबा भी देखते हैं और अपनी बारी का इन्तजार भी करते हैं। सभी में जबरदस्त उत्साह देखने को मिलता है। माता के दरबार में नवरात्रि का बहुत ही सुन्दर गरबा होता है। एक लय और ताल पर डांडिया खनकते हैं। महिलाओं के उत्साह से ऐसा लगता है जैसे माता स्वयं गरबा में

सम्मिलित होकर सभी को अपना आशीर्वाद प्रदान करती रही है।

गरबा राउण्ड की समाप्ति के पश्चात् बच्चों की फैन्सी ड्रेस प्रतियोगिता, क्विज प्रतियोगिता आदि का भी आयोजन किया जाता है तथा सर्वश्रेष्ठ गरबा करने वाले बच्चों, लड़कियों, महिला–पुरुषों एवं अन्य स्पर्द्धाओं के विजेताओं को पुरस्कार एवं सम्मान चिन्ह प्रदान किये जाते हैं।

मूर्ति का विसर्जन

विजय दशमी के दिन अपरान्ह में नवरात्रि का हवन करने के पश्चात् माँ की मूर्ति को जल में विसर्जित किया जाता है। माँ की मूर्ति को मंच से नीचे उतार लिया जाता है तथा गरबा स्थल पर नवरात्रि हवन किया जाता है जिसमें कुछ दम्पत्ति हवन में आहूतियां देते हैं। कई लोग अपने घरों पर भी नवरात्रि में जवारा बोते हैं, सभी घरों से भी जवारों को विसर्जन के लिए लाकर माँ की मूर्ति के पास रख दिया जाता है। पुरोहित जी के मंत्रोच्चार के साथ हवन में आहूतियाँ दी जाती हैं। विसर्जन के लिए ढ़ोल, मंजीरा एवं नगाड़ा वादकों को भी बुलाया जाता है। हवन की पूर्णाहुति के पश्चात् सभी जवारा कलशों को गणेशजी की प्रतिमा के साथ एक ट्रैक्टर ट्रोली में रख दिया जाता है। दूसरे ट्रैक्टर में म्यूजिक सिस्टम एवं अन्य सामग्री को रखा जाता है। विसर्जन के लिए ले जाने हेतु गरबा स्थल से माँ दुर्गा की प्रतिमा को सावधानीपूर्वक एक ट्रैक्टर ट्रोली में रखा जाता है। माँ की शोभायात्रा प्रारम्भ होने से पूर्व उपस्थित सभी भक्त मिलकर माँ दुर्गा की आरती करते हैं। पुजारी जी सभी भक्तों पर आरती का पवित्र जल छिड़कते हैं और भक्तों को आरती देते हैं।

मित्रमण्डल के कार्यकर्ता जुलूस के साथ आगे बढ़ते हैं। इस शोभायात्रा में जनता का मनोरंजन करने वाले कलाकारों को भी बुलाया जाता है साथ ही माता की मूर्ति के साथ इस शोभायात्रा में कुछ झांकियां भी चलती हैं जैसे गणेशजी की झांकी, मीरा और कृष्ण की झांकी, समाधि लिये हुए साधु की झांकी, पर्यावरण का संदेश देने वाली झांकी आदि। माता के वाहन को एक मन्दिर का रूप देकर माँ का जुलूस सुथारवाड़ा से उदयपुर की प्रसिद्ध पिछोला झील में गणगौर घाट की ओर बढ़ता है। शोभायात्रा के पीछे–पीछे भक्त लोग चलते हैं। रास्ते में बीच–बीच में शोभायात्रा को रोककर जनता का मनोरंजन किया जाता है। इस शोभायात्रा के लिए बाहर से बुलाये गये कलाकार पारम्परिक वेशभूषा में राजस्थान का प्रसिद्ध गैर–नृत्य खेलते हैं। रास्ते में ढोल, मंजीरा एवं नगाड़ा वादक एक साथ मिलकर अपनी कला का परिचय देते हैं और भक्तों का मनोरंजन करते हैं। यह शोभायात्रा, उदयपुर शहर के मुख्य बाजारों से होकर आगे बढ़ती है, रास्ते में भक्त लोग माँ की झांकी के दर्शन करते हैं।

प्रसिद्ध जगदीश मन्दिर स्थित जगदीश चौक पर जुलूस थोड़ी देर के लिए रूकता है। यहाँ बड़ी संख्या में लोग विभिन्न जुलूसों एवं शोभायात्राओं को देखने के लिए एकत्रित होते हैं। कलाकार लोग यहां अपनी कला का प्रदर्शन करके जनता का मनोरंजन करते हैं। इस अवसर पर विदेशी पर्यटक भी बड़ी तन्मयता से विभिन्न झांकियों के दर्शन करते हैं और भारतीय धार्मिक–सांस्कृतिक परम्परा की सराहना करते हैं, जिसे देखने के लिए वे सैंकड़ों किलोमीटर दूर यहां खींचे चले आते हैं। यहाँ से जुलूस गणगौर घाट की ओर आगे बढ़ता है। इस अवसर पर माता के भक्तों में जबरदस्त उत्साह देखा जा सकता है। माता रानी के जयकारे बोलते हुए बच्चे, स्त्री–पुरुष, सभी भक्त नाचते–गाते आगे बढ़ते हैं। भक्त लोग माँ की मूर्ति एवं झांकी पर चंवर ढुलाकर उनका अभिनन्दन करते हुए आगे बढ़ते हैं।

शाम आठ बजे सुथारवाड़ा की माँ दुर्गा का यह जुलूस बड़ी शान के साथ अपने अन्तिम पड़ाव गणगौर घाट पर पहुँचता है। विसर्जन से पूर्व आखिरी बार सभी भक्त लोग मिलकर माँ की आरती करते हैं। भक्त लोग अपलक निगाहों से माँ की मूर्ति को निहारते हैं। इस विदाई की बेला पर सभी भक्तों की आँखें माँ के दुलार में नम हो जाती हैं। माँ के जयकारों से पूरा गणगौर घाट गूंज उठता हैं सभी भक्त लोग माँ की आरती को सिर आँखों पर लगाते हैं। इस विसर्जन के लिए पर्यटन विभाग द्वारा एक बड़ी नाम उपलब्ध करवाई जाती है। इस नाव में सभी छोटी मूर्तियों के साथ माँ की मूर्ति को सावधानीपूर्वक रखा जाता है। भक्त लोग मूर्ति को अपने हाथों से सहारा देते हैं। सुथारवाड़ा मित्र–मण्डल के कार्यकर्ता एवं कुछ प्रमुख भक्त लोग इस नाव में सवार होकर आगे बढ़ते हैं। बाकी भक्त लोग गणगौर घाट से मूर्ति का विसर्जन देखते हैं। नाव में स्थित भक्त लोग आहिस्ता–आहिस्ता अपने हाथों से माता की मूर्ति को पिछोला झील के जल में विसर्जित कराते हैं। पूरा गणगौर घाट अम्बे माता के जयकारों से गूंज उठता है। इसके साथ ही नवरात्रि का उत्सव, डांडियों की खनक और गरबा नृत्य का यह विशेष त्यौहार सम्पन्न होता है। अब मेवाड़ के लोगों को इन्तजार रहता है, अगले वर्ष की नवरात्रि का।

निष्कर्ष

धर्म और धार्मिक परम्परायें लोगों की आस्था और विश्वास पर टिकी हुई हैं। परम्पराओं की पालना करना, लोग अपना नैतिक और सामूहिक कर्तव्य मानते हैं। लोगों का यह दृढ विश्वास है कि धार्मिक परम्पराओं, त्यौहारों एवं उत्सवों का अनुसरण जहाँ एक ओर उन्हें नैतिक कर्तव्य में बांधता है वहीं दूसरी ओर इससे उनकी सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा होती है। लोग अपने इन धार्मिक–सांस्कृतिक प्रतिमानों की आँख बन्द कर पालना करते हैं, इसमें कोई तर्क नहीं चलता। लोगों एवं भक्तों का यह दृढ विश्वास होता है कि एक अदृश्य देवीय शक्ति उनके जीवन का अनुरक्षण करती हैं। जब व्यक्ति के समक्ष भौतिक परिस्थितियाँ रास्ता रोककर खड़ी हो जाती है तब व्यक्ति दैवीय चमत्कार एवं देवीय अनुकम्पा से मार्ग प्रशस्त होने की अपेक्षा करता है। व्यक्ति धर्म एवं धार्मिक परम्पराओं की पालना इसलिए भी करता है कि वह अपने को अन्दर से कमजोर महसूस करता है, वह इस जीवन–संसार में अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए ईश्वरीय आशीर्वाद एवं दैवीय शक्ति को अपने आस–पास होने की बलवती इच्छा रखता हैं। यह आस्था और विश्वास ही उन्हें एकता के सूत्र में पिरोती हैं, उन्हें

कुछ भी बुरा करने से रोकती हैं, मूल्यों की पालना करना सिखाती हैं और यहीं इन धार्मिक–सांस्कृतिक लोक पर्वों एवं लोक उत्सवों का प्रकार्यात्मक योगदान हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *Redfield, Robert, 1955. "The little community", Chicago: University of Chicago press.*
2. *Singer, Milton 1955-56. "The cultural pattern of Indian Civilization:A preliminary Report ofA methodological field study". Far Eastern quarterly, Vol. 15.*
3. *Marriott, Mckim, 1955. Little Communities inAn indigenous civilization (ed.) in, "Village India: Studies in the little communities".*
4. *Dev, Indra. 1985. Oral TraditionAnd the Study of peasant society. "Diogenes.*
5. *Mukharji, D.P. 2002. "Diversities: Essays in Economics, SociologyAnd other social problems", New Delhi: Manak Publication.*
6. *Dumont, Louis, 1970. "Homo Hierarchicus". The Univesrity of Chicago Press, London.*
7. *सिंह, योगेन्द्र 2006. ''भारतीय परम्परा का आधुनिकीकरण, (Modernization of Indian Tradition)",* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर–नई दिल्ली।
8. *जोशी आनंद, धीरेन्द्र 'राहुल'. 2007. ''पत्रिका इयर बुकः'' राजस्थान पत्रिका प्रा. लिमिटेड, जयपुर (राज.)*
9. *शास्त्री, आचार्य पं. शिवदत्त मिश्र. 2006. ''दुर्गा–नवरात्र व्रत–कथाः'' रूपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी।*
10. *'जुगनू', श्रीकृष्ण, 2000 ''मन्दिर श्री अंबा माताजी उदयपुर'', महाराणा मेवाड़ हिस्टोटिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट, सिटी पैलेस, उदयपुर।*
11. *चतुर्वेदी पं. ज्वाला प्रसाद (भाषाकार). 2002. ''श्री दुर्गा सप्तशती अथवा नव दुर्गा पाठ'', रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार।*